International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 3; Issue 2; March 2017; Page No. 23-24

जयपुर रियासत में जागीरदारी व्यवस्था

डॉ0 चित्रा तंवर

व्याख्याता, जगत्गुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविधालय, जयपुर, राजस्थान, भारत।

सारांशः
जयपुर रियासत में यहां के शासक पृथ्वीराज ने अपने शासनकाल में अपने बारह पुत्रों को जागीरे प्रदान की थी जिन्हें बारह कोटड़ियां कहा गया। ये सम्राट को सैन्य सेवा उपलब्ध करवाते थे। सन् 1904 ई. में जयपुर में ''कोर्ट ऑफ वार्डस्'' की स्थापना की गई जो इन जागीरों व जागीरदारों पर अपना नियन्त्रण रखती थी। अतः जनता एक ओर तो शासक तथा दूसरी ओर इन जागीरदारों के दोहरे नियन्त्रण में थी। जयपुर रियासत में जो राजनैतिक आंदोलन हुआ, वह इसी दोहरे प्रशासन का ही नतीजा था।

मूल शब्दः कोटड़ियाँ, तफादत, मुआमला, इस्ततयर, चकोटी, ईनाम, उदक, भोग, अलूफा, खांगी, कोर्ट ऑफ वार्डस्, ग्रांट, भोमिया, पट्टा, चतुर्भुजोत, कल्यानेत, बलभद्रोत, सुलतानोत, पचनोत, खूंभानी, शिवबरन पोता, बनवीर पोता, जागीर।

प्रस्तावना

जयपुर रियासत राजपूताना के पूर्वी भाग में $25^0.41'$ से $28^0.34'$ उत्तरी अक्षांक्ष एवं $74^0.41'$ से $73^0.13'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य 15,601 वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ था। उस समय इसकी राजधानी दौसा थी तथा यह राज्य ढूंढाड़ राज्य के नाम से प्रसिद्ध था। दुल्हाराय के पुत्र कोकिलदेव ने सन् 1037 ई. में आमेर पर अपना अधिकार कर उसे अपनी राजधानी बनाया। 1727 ई. में सवाई जयसिंह द्वितीय ने अपने शासनकाल के दौरान जयपुर नगर की स्थापना कर उसे अपने राज्य की राजधानी बनाया।

जयपुर रियासत में प्रारम्भ से ही जागीरदारी व्यवस्था का अस्तित्व था। जागीरदारी प्रथा के अन्तर्गत राज्य की सेवा, सैनिकों के वेतन इत्यादि के बदले एवं धर्मार्थ तथा अन्य महत्वपूर्ण कार्यों के बदले इनाम स्वरूप तत्कालीन शासक (राजा या नवाब) भूमि का टूकड़ा, गांव या कस्बा आदि जागीर में दे दिया करते थे। उस जागीर का मालिक (स्वामी) जागीरदार कहलाता था जो उस जागीर की व्यवस्था बनाये रखने के लिए कई प्रकार से धन संग्रह करता था जिनमें भूमि–विक्रय भी उसकी आय का एक साधन था। भूमि जिस व्यक्ति को बेची जाती थी उस व्यक्ति को उस भूमि के टुकड़े के सम्बन्ध में एक कागज पर पूर्ण विवरण लिखकर दें दिया जाता था। उस अभिलेख को उस भूमि का 'पट्टा' कहा जाता था

जयपुर राज्य का कुल क्षेत्रफल 15,601 वर्गमील था जिसमें से खालसा क्षेत्र 4,879 वर्गमील था शेष 10,722 वर्गमील का क्षेत्र अलग–अलग मालगुजारी पर जागीरदारों को मिला हुआ था, जो गैर खालसा क्षेत्र था। इस प्रकार सम्पूर्ण जयपुर रियासत के 31.3 भाग पर खालसा क्षेत्र तथा 68.7 भाग पर गैर–खालसा क्षेत्र था।[1]

यहां यह उल्लेखनीय है कि जयपुर राज्य में सर्वप्रथम यहां के शासक पृथ्वीराज (1502–1528 ई.) ने अपने बारह पुत्रों के भरण–पोषण के उद्देश्य से भूमि प्रदान कर प्रधान सामन्त[2] पद पर नियुक्त किया था। इस प्रकार उसे कछवाहों की 12 कोटड़ियों का प्रादुर्भाव किया। जिनके नाम चतुर्भुजोत, कल्यानेत, नाथावत, बलभद्रोत, खंगारोत, सुलतानोत, पचनोत, गोगावत, खूंभानी, कुमावत, शिवबरन पोता, बनवीर पोता था। आगे चलकर इन कोटडियों की संख्या 12 से बहुत अधिक हो गयी थी। पहले के शासकों के वंशजों द्वारा अधिकार कर ली गयी कुछ जागीरें बढ़कर कोटडियों (बड़े घर) का रूप ले चुकी थी। इन जागीरदारों से यह आशा की जाती थी कि यह शासक को हाथियों, घोड़ों, पालकियों या पैदल सैनिकों आदि के रूप में सैनिक सेवा प्रदान करें।[3] यह उल्लेखनीय है कि इन जागीरदारों द्वारा दिये गये कुल घुडसवारों की संख्या 4250 थी।[4] अगर कोई जागीरदार निश्चित संख्या में सेवा के लिए घोडे आदि नहीं भेजता था तो उस पर दंड के रूप में जुर्माना (तफादत) किया जाता था।

ब्रिटिश संरक्षण की स्थापना के बाद राज्य के शासकों और सांमतों में सैनिक सेवा के सम्बन्धमें विवाद उठ खड़ा हुआ। इस विवाद का मुख्य कारण यह था कि शांति और व्यवस्था के लिये अंग्रेज अधिकारियों ने शेखावाटी ब्रिगेड की स्थापना की जिसका खर्च जागीरदारों पर डाल दिया गया। ब्रिटिश संरक्षण के पश्चात् आपसी युद्धों का अंत हो जाने से शासकों को सामन्तों की सैनिक सेवाओं की उतनी आवश्यकता नहीं रही। अतः उन्होंने सैनिक बटालियन के लिए नकद रुपया चुकाने के फलस्वरूप जयपुर के राजाओं ने भी अपने सामन्तों से सैनिक सेवा के बदले में नकद रुपया वसूल करने का निश्चय किया किंतु अभी भी कुछ जागीरदार सैनिक सेवा ही भेजते रहें और 1923 ई. तक आते–आते 'तफादत' की बकाया रकम बढ़कर एक करोड़ रुपये तक जा पहुंची थी। अन्ततः 1925 ई. में भारत सरकार की स्वीकृति से पूरे राज्य में यह व्यवस्था कर दी गई कि सभी जागीरदार सैनिक सेवा के स्थान पर नकदी रुपया भेजें।[5]

जयपुर राज्य के जागीदारो ने इस परिवर्तन को सहर्ष स्वीकार किया क्योंकि यह व्यवस्था उनके लिए कम खर्चीली थी और इससे उनकी कई परेशानियां भी दूर हो जाती थी। इस प्रकार से इस व्यवस्था से राज्य को मिलने वाली कुल राशि 7 लाख रुपये प्रतिवर्ष थी। पुरानी पद्धति को खत्म किये जाने के साथ ही 'बख्शी जागीर' का पद भी समाप्त कर दिया गया था।

जयपुर राज्य में जागीरों के अलावा भूमि अन्य प्रकार के अनुदानों के अन्तर्गत भी दी जाती थी, जो इस प्रकार थे –

मुआमला

'मुआमला' शब्द का अर्थ मुख्य रूप से एक व्यवस्था या समझौता था[6] जिसके अनुसार एक निश्चित रकम जागीरदारों को चुकानी होती थी। जयपुर के कुछ सबसे बड़े ठिकाने जैसे – सीकर, खेतड़ी, उनियारा, बिसाऊ आदि इस श्रेणी में आते थे। इनमें सीकर, खेतड़ी इतने बड़े थे कि अपने आप में पूरे एक राज्य का रूप लिये हुए थे।

सूबेगुजार तथा इस्तमरार

सूबागुजार शब्द का अर्थ अच्छी तरह से स्पष्ट नहीं है परन्तु रिकॉर्ड देखने पर यह स्पष्ट होता है कि इसके अन्तर्गत आने वाले जागीरदार जागीर के बदले में बचे हुए ऋण का भुगतान करते थे।[7] सूबागुजारी सवाईमाधोपुर निजामत से सम्बन्ध रखती थी। इन सूबेगुजारों की सेवा की कोई जिम्मेदारी नहीं होती थी।[8]

इस्तमरार के अन्तर्गत वो जागीरदार आते थे जिनके पास वंशानुगत लीज थी। यह लीज किराये से सम्बन्धित होती थी तथा इसमें किसी भी तरह से कर से छूट थी।[9]

चकोटी

यह ब्याज का पट्टा या एक ग्रांट थी जो निजामत तोरावाटी की भूमि से सम्बन्ध रखती थी। जो 'चकोटी' के बराबर होती थी। 'चकोटी' का अर्थ चुकाने से है। यह पट्टे छोटे भूमिदारों पर लागू होते थे जिनकी संख्या बहुत बड़ी थी। भोमिया टेन्यूर बहुत पुरानी थी। यह मूल रूप से मुगलों के अधीन थी जिसकी शक्तियां 1730 ई. में सवाई जयसिंह को स्थानान्तरित कर दीगयी थी।[10]

ईनाम

ईनाम एक आय (फ्री ग्रांट) थी जो किसी व्यक्ति विशेष को उसकी सेवाओं के बदले प्राप्त होती थी। साधारण रूप से यह ग्रांट उन व्यक्तियों को दी जाती थी जो गैर राजपूत होते थे।[11]

तनख्वाह (तन्खा)

यह उस व्यक्ति की भूमि की एक ग्रांट थी जो सेवा करने का उत्तरदायी हो। यह ग्रांट आगे चलकर अनुवांशिक हो गयी थी। पुराने समय में सेवा के बदले जागीर देना प्रचलित था।[12]

उदक

यह राजस्व से मुक्त ग्रांट थी जो दान में या मन्दिरों को सहायता के रूप में दी जाती थी जैसे – धर्मशालाओं आदि को। ये स्थायी तौर पर की होती थी।

भोग

यह भी राजस्व मुक्त भूमि की ग्रांट थी जो खालसा मन्दिरों के देवताओं या बाहर के देवताओं के भोग के लिए दी जाती थी। 'भोग और उदक' के अन्तर्गत जयपुर के शासकों ने बहुत भूमि भेंट में दी थी। यह भेंट वार्षिक रूप से 20 लाख रुपये थी।

अलूफा

राजाओं के घर की स्त्रियों की देखभाल करने वालों को भूमि दान में दी जाती थी। यह भेंट भिन्न–भिन्न प्रकार की रही थी। आगे चलकर इसको बंद करने की दिशा में कदम उठाये गये और यह प्रस्ताव रखा गया कि यह जिसको भेंट में दी गयी थी, उसके जीवन काल तक की होगी।[13]

खांगी

इस भूमि की भेंट राजा के घर की रक्षा, देखभाल करने वाले व्यक्ति को दी जाती थी। इसमें 'लवाजमा' (वस्तुओं की देखभाल) की भेंट तथा कोटड़ी खर्च भी शामिल था।[14]

जयपुर के शासकों के इतिहास से यह पता चलता है कि वे अपने प्रिय लोगों को चाहें वह कोई भी क्यों न हो, उन्हें बड़ी–बड़ी भूमि का भाग भेंट में देते थे। कभी–कभी असंतुष्ट सरदारों को भी जागीरें दे दी जाती थी। जो अपने राज्य में प्रताड़ित होकर जयपुर आकर शरण लेते थे। इससे हमें जयपुर राज्य में बड़ी संख्या में गैर कछवाहा जागीरदारों की उपस्थिति का प्रमाण मिलता है। इस प्रकार से भूमि राजाओं द्वारा अपने प्रिय सेवक, दासियों, प्रेमिकाओं को भी दी जाती थी। परन्तु यहां यह उल्लेखनीय है कि वह भूमि शासक की मृत्यु या भूमिधारक की मृत्यु के पश्चात् वापस राज्य में सम्मिलित हो जात थी। इस प्रकार से विभिन्न श्रेणियों वाले सारे भूमि धारकों की कुल संख्या 1160 थी।[15] इस पर सारे राज्य में ठिकानों का जाल भी फैला हुआ था। पर ये ठिकाने एक सुदृढ़ क्षेत्र के रूप में नहीं थे बल्कि यह टुकड़ों के रूप में राज्य की सम्पूर्ण लम्बाई, चौडाई में फैले हुए थे।

इनमें महत्वपूर्ण सरदार 'ताजीमी सरदारों'' की श्रेणी में आते थे। इनकी संख्या 150 के करीब थी। यह सभी राजपूत नहीं थे। इनमें से कुछ ब्राह्मण, संत, महन्त, कायस्थ और मुस्लिम व दूसरे लोग थे। ताजीमी सरदार जब दरबार में महाराजा को 'नजर' करते थे तब महाराजा स्वयं खड़े होकर 'नजर' लेता था। इन सरदारों को पैर में सोना पहनने का अधिकार प्राप्त था। आगे चलकर 1904 ई. में जयपुर राज्य में एक कोर्ट ऑफ वार्ड्स की स्थापना की गई जो इन जागीरों व जागीरदारों पर अपना नियन्त्रण रखता था। इस प्रकार हम कह सकते है कि जयपुर रियासत की जनता एक ओर तो राजा व दूसरी ओर जागीरदार अर्थात् दोहरे प्रशासन का शिकार थी। जयपुर रियासत में होने वाला राजनैतिक आंदोलन इसी दोहरे प्रशासन का ही परिणाम था।

संदर्भ

1. जागीर क्षेत्र और खालसा क्षेत्र का अनुपात विभिन्न समय में घटता–बढ़ता रहा। 1922 ई. में गैर खालसा क्षेत्र सम्पूर्ण क्षेत्र का 71.2 प्रतिशत था। जयपुर एड. रिपोर्ट, 1922–26, पृ. संख्या 34, (प्रकाशित) राज. राज. अभि. बीकानेर
2. जयपुर राज्य में इनको ठाकुर कहा जाता था। कई सामन्तों को 'राव', 'राजा', 'रावल', 'रावराजा', 'रावत' आदि की पदवियां प्राप्त थी, जो कुछ को व्यक्तिगत तो कुछ को वंशानुगत आधार पर दी गई थी – मुंशी राधालाल कृत ''इतिहास जयपुर'' पृ. 130 (हस्तलिखित दस्तावेज) राज. राज. अभि, बीकानेर (राज)
3. मुंशी राधालाल कृत ''इतिहास जयपुर'' पृ. 132 (हस्तलिखित दस्तावेज) राज. राज. अभि, बीकानेर (राज)
4. टॉड – एनल्स एंड एण्टीकीटीज ऑफ राजस्थान, पृ. 1292 (टॉड के अनुसार यह संख्या 4000 थी)
5. जयपुर एड. रिपोर्ट, वर्ष 1925–26, पृ. संख्या 41, (अप्रकाशित) राज. राज. अभि. बीकानेर
6. विल्स – पंचनामा, पृ. 88, राज. राज. अभि., बीकानेर (राज)
7. डॉ. श्यामसिंह 'रत्नावत' – राजपूत नोबिलिटि, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 1989, पृ. 295
8. द कोर्ट ऑफ वॉर्ड्स एक्ट, 1925, राज. राज. अभि जयपुर शाखा (अप्रकाशित)
9. जयपुर रेवेन्यु रिकॉर्ड्स पेज नं. आर–6 (जागीर), फाईल नं. 554/1889, पृ. 136, राज. राज. अभि जयपुर (शाखा), विल्स – लैण्ड टेन्यूर्स, पृ. 80, राज. राज. अभि., बीकानेर (राज)
10. द जयपुर स्टेट ग्रान्ट एंड टेन्यूर एक्ट 1947, सेक्शन 15, पृ. 3, राज. अभि. जयपुर (शाखा)
11. वहीं, पृ. 28
12. वहीं सेक्शन – 15
13. द जयपुर एलबम और ऑल अबाउट जयपुर, द राजस्थान डायरेक्ट्रीज पब्लिशिंग हाऊस, पृ. 2 (जागीर) (जयपुर दरबार का निजी एलबम) राज. राज. अभि., बीकानेर (राज)
14. वहीं, पृ. 2
15. जयपुर रेवेन्यु रिकॉर्ड्स पेज नं. आर–6 (जागीर), फाईल नं. 4402/1920, पृ. 4–6, राज. राज. अभि जयपुर (शाखा)